शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

'विराट' के गीतों में प्रेम और प्रकृति

श्रद्धा दुबे
शिक्षिका
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

गीत गंगा के भागीरथी एवं प्रतिष्ठित कवि श्री चंद्रसेन 'विराट' स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी गीति -काव्य के प्रमुख कवि हैं। 'श्री विराट' के काव्य की सर्जनात्मक संवेदना युगबोध से अनुप्राणित हैं। प्रेम और प्रकृति उसके उपादान है। जीवन के माधुर्य और वेदना का प्रस्फुटन आपके काव्य की विशेषता है। 'विराटजी' के अब तक कुल बारह गीत-संग्रह प्रकाशित हुए हैं, जिनमें कवि ने प्रेम और प्रकृति को प्रमुखता से प्रतिबिंबित किया है। कवि की संवेदना एवं चेतना अनुभूतिगम्य एवं प्रामाणिकता से अभिप्रमाणित है तथा साधारण जनमानस की अनुभूतियों, विचारों, दृष्टिकोणों और इच्छाओं को अभिव्यक्त करती है। उनके गीत काव्य को हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। प्रथम भाग में कवि की मूल चेतना श्रृंगार सौन्दर्य विषयक प्रेमानुभूति को अभिव्यक्त करती है तो दूसरे भाग में वे सामाजिक भावभूमि को प्रतिबिंबित करते हैं। तीसरे भाग में कवि ने हमें सही जिंदगी जीने का रास्ता दिखलाया है। कवि हमें निर्माणपरक दायित्व का बोध कराते हैं।

प्रस्तावना

गीत अन्तरात्मा की कोमल अभिव्यक्ति है। सत्य के शिवत्व का सौन्दर्य है। लय छंद की आत्मा, छंद गीतात्मा और गीत काव्यात्मा माना जाता है। अपनी कोमलकांत पदावली, मधुरता, सरसता, सहजबोधगम्यता, गेयता आदि गुणों के कारण गीतिकाव्य सहृदयों के चित्त को आह्लादित करता रहा है।

हिन्दी गीतिकाव्य की अविच्छिन्न परंपरा में कवि श्री चंद्रसेन 'विराट' का नाम विशेष उल्लेखनीय है। 'श्री विराट' स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी गीतिकाव्य के प्रमुख कवि हैं। वे न केवल सफल गीतिकार हैं, अपितु हिन्दी गजल एवं गीति समीक्षा के सिद्धांत निर्माता भी हैं।

श्री चंद्रसेन विराट महाराष्ट्रियन मूल के हिन्दी रचनाकार हैं। उनका जन्म दिसंबर 1936 को इन्दौर के ग्राम बलवाड़ा में हुआ। काव्य सृजन के मूल संस्कार इन्हें अपनी माता से मिले । माँ के सुमधुर गीतों और भजनों ने सुसंस्कारों की ऐसी नींव डाली कि बालक, चंद्रसेन डोके 'चंद्रसेन विराट' बन गए।

'श्री विराट' के अब तक कुल बारह 'गीत संग्रह' प्रकाश में आए हैं, जो इस प्रकार हैं :

1. मेहन्दी रची हथेली 1965
2. स्वर के सोपान 1968
3. ओ मेरे अनाम 1968
4. किरण के कशीदे 1974
5. मिट्टी मेरे देश की 1975
6. पीले चावल द्वार पर 1978
7. दर्द कैसे चुप रहे 1978
8. भीतर की नागफनी 1978
9. पलकों में आकाश 1978
10. बूंद-बूंद पानी 1979
11. सन्नाटे की चीख 1996
12. गाओ कि जिये जीवन 2003

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

गीति-काव्य के अतिरिक्त कवि ने गजल एवं मुक्तक पर विपुल साहित्य रचना की है। अपने गीतों में कवि ने जीवन के विभिन्न 'पहलुओं' यथा -प्रेम, प्रकृति, वेदना आदि के साथ-साथ अपने युगबोध और उससे प्रेरित राष्ट्रीयता को अपने काव्य का वर्ण्य विषय बनाया है।

प्रेम और प्रकृति काव्य की सर्जनात्मक संवेदना के शाश्वत आधार हैं। अतः कवि का भावुक मन इस ओर आकृष्ट होता है और प्रेम की तीव्र व गहन अनुभूतियों में खोता चला जाता है। प्रकृति एक सहचरी के समान अपने सुकुमार रूप में कवि के इर्द-गिर्द मंडराती रहती है। कभी वह चाँदनी बनकर तो कभी सावन की घटा बनकर कवि के प्रेम से संतप्त मन को शीतलता प्रदान करती हैं तो कभी काम से उद्दीप्त कर देती है।

विषय वस्तु

प्रस्तुत शोध- पत्र का मूल प्रतिपाद्य कवि 'श्री विराट' के गीतों में व्यक्त प्रेम और प्रकृति की गहन अनुभूति को प्रकट करना है। 'विराट के गीतों की प्रमुख विशेषता यही है कि उनके गीत पावन पुलकित प्रणय-प्रसंगों पर आधारित है, जो कि मन की कोमल भावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति करते हैं। वे प्रेम को सर्वशक्तिमान मानते हैं। प्रेम के प्रभाव से पत्थर देवता बन जाता है और शैतान इंसान बन जाता है, तभी तो वे कहते हैं कि -

"प्यार मिला तो पत्थर देव हुआ "(1)

जिस प्रकार सूर्य सम्पूर्ण भूमंडल को अपनी रश्मियों से आलोकित कर देता है, उसी प्रकार कवि के प्रेम की उदात्त भावना व्यक्ति की संकीर्णताओं व तुच्छ भावनाओं का शमन कर उसके तन और मन को उज्जवल बना देती है। तभी तो कवि का उदार हृदय जाति, वर्ण व समाज के दायरे से बाहर निकल प्रेम का विस्तार करना चाहता है -

"जीवन का जो उदयाचल है
पावन जड़ता तक डोल रही
जिससे मेले में हलचल है
वह प्यार तुम्हें हैं पाप अगर
तो ज्ञानी धर्मी लोग सुनो !
तुम पुण्यवान हो लो जग में
मैं पापी का सिरमौर सही" (2)

प्यार गंगाजल की तरह पवित्र होना चाहिए। वासना से निर्लिप्त होना चाहिए क्योंकि वासनाएँ प्रेम के प्रवाह को अवरूद्ध कर देती हैं। मन की कलुषता जब सौन्दर्य पर दृष्टिपात करती है तो वासना विष से विषाक्त होकर प्रेम को दूषित कर देती है। प्रेम की पवित्रता को बनाए रखने के लिए हमारी दृष्टि निर्मल होनी चाहिए -

"समदर्शी निष्पक्ष आइने
मुझे दृष्टि की पावनता दे।" (3)

प्रेम सत्यं, शिवं, सुन्दरम् का समन्वित रूप है, जो जीवन को पूर्ण बनाता है:-

"प्यार बिना है रूप अधुरा
प्यार पूर्णता है जीवन में
सत्यं शिवं सौन्दर्य जगत का
एकत्रित स्थित प्रेम स्तवन में ।। (4)

'श्री विराट' के गीतों में प्रेम की तीव्र व गहन अनुभूतियाँ विद्यमान हैं। कवि ने स्वयं उनका अनुभव किया है। वें मिलन का सुख और विरह की बाधा का वर्णन करने में विशेष सफल रहे हैं। उनकी अनुभूतियाँ उनके कवित्व संस्पर्श पाकर खिल उठी हैं -

"सरिता के तट पर जब गई अकेली तुम
शपथों की स्मृतियाॅं घिर आई होगी
तुम रोको रोको उसके पहले ही
पलकों पर बूंदें तिर आई होगी

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

तब गाया होगा मेरा गीत प्रिये
बस इसीलिए मेरे स्वर अकुलायें''(5)

'श्री विराट' की वैयक्तिक चेतना उनकी गहन प्रेमानुभूतियों का भी प्रामाणिक परिचय देती है। उनके पास सौन्दर्य को पहचानने की नवीन दृष्टि है, तभी तो वें विविध प्रकार से सौन्दर्य के चित्र उकेरते हैं -

''रंग चांदनी, नयनसें नील वितान है
पलकों में रजनी, स्मित में दिनमान है
अंगराग में बसी संदली गंध है
पोर पोर में केशर है, मकरंद है''(6)

'विराट' के गीतों में संलाप के दृश्य भी बड़े ही सहज एवं मोहक बन पड़े हैं। मिलन का व्याकुल निमंत्रण संजोए कवि का संलाप कितना सहज एवं स्वाभाविक है -

''लाज से हाथ क्यों धर लिया
चाँद को कैद क्यों कर लिया
मुख दिखाओ जरा
शेष है बस पहर भर निशा
चुप पड़ी नींद में हर दिशा
जागते एक तुम, एक हम
बुझ गया दीप बस अंध तम
पास आओ जरा'' (7)

प्रेम एवं श्रृंगार वर्णन में सौन्दर्य वर्णन का विशेष महत्व रहता है क्योंकि सौन्दर्य श्रृंगार का मुख्य संवर्द्धक कारक है। इसीलिए विद्यापति, बिहारी आदि सभी कवियों ने श्रृंगार वर्णन के संदर्भ में रूप वर्णन को भी महत्व दिया है। विराट ने भी इस परंपरा का निर्वाह किया है वे अपनी प्रेयसी के अनिंद्य सौन्दर्य की प्रशंसा करते हुए कहते हैं।''

''किरण सुकुमारिका हो तुम
कहो तो रोशनी ले लूँ
स्वरों की सारिका हो तुम
प्रणय की रागिनी ले लूँ'' (8)

मिलन का आनन्द बिछुड़न की कल्पना मात्र से सिहर उठता है। प्रेम में मिलन के क्षण जितने भावुक एवं मार्मिक हैं उससे कहीं अधिक भावुकता एवं मार्मिकता वियोग के क्षणों में है। जैसे भावपूर्ण आग्रह मिलन के समय प्रिय से न जाने के अनुरोध में मिलता है वैसा ही भावपूर्ण और उससे भी अधिक हृदयावर्जक आग्रह प्रवासी प्रिय के आमंत्रण में दिखलाई देता है और जब प्रिय बिछड़ जाता है तो फूल भी शूल बनकर चुभने लगता है -

''तुम ही क्या बिछड़े बहार में''(9)

प्यार के दायरे में आकर जड़ भी चेतन हो जाता है, जिस प्रकार जलसिंचन से वृक्ष पुष्पित एवं फलित हो जाता है, उसी प्रकार प्रेममयी अनुभूतियों से मन परिष्कृत, संस्कारित, पोषित होता है। अतः प्रेम सृष्टि की सभ्यता एवं संस्कृति का शिखर मानक है। जीवन की इस गत्यात्मकता को विराट के गीत सहज भाव से सामने लाते है।

''प्यार से ही छंद है, प्यार से ही गीत है'' (10)
''छंद गीत को, गंध फूल को,
वैसे ही हो तुम मुझको'' (11)

मनोमालिन्य से परे विराट के गीत प्रिया के सात्विक सौन्दर्य के अनेक चित्र प्रस्तुत करते हैं। पावन प्रेम की भूमि पर लहराती 'विराट' की गीत-गंगा अपनी यात्रा में कहीं भी कलुषित नहीं होती। प्रणय दर्शन में उसका रूप सौन्दर्य सौरभ की तरह सुवासित करता है। प्यार की इसी मनोरम प्रतीति का गत्यात्मक रूप-बिम्ब देखिए-

''वासना छंद में कैसे बांधू मै।
शुभ शब्दों को लज्जित होना होगा।''(12) बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा कवि का मन आन्तरिक

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सौन्दर्य में अधिक रमता है तभी तो वह अपनी प्रेमिका से कहता है कि -

"रिझा नही पाओगे मुझको
केवल तन के सिंगार से" (13)

कवि के लिए दैहिक सुख कोई मायने नही रखता है वह आत्मिक मिलन को ही परम श्रेय मानता है तभी तो वह कहता है कि -

"जनम-जनम को ब्याह चुके है अपने मन
तन से हम भांवर न फिरे तो भी क्या है?
तन की मांसल हथकड़ियों से बंधें न हम
हमको बांधे आत्म स्नेह के धागे है।"(14)

कवि की अपनी प्रेयसी के प्रति अटूट आस्था है, जब वह बोलती है तो स्वर जन्म लेते हैं, शब्दों के सच्चे अर्थ निकलते हैं। यह प्रेम की पराकाष्ठा नही तो और क्या है -

"जब तुम बोली तो स्वर जन्में,
शब्दों के सच्चे अर्थ मिलें।
तुमसे भाषा का मन हल्का,
तुमसे छंदो के फूल खिलें।"(15)

इस प्रकार श्री विराट के गीतों में प्रेम के विविध रूपों का बड़ी ही मार्मिकता, सहजता एवं गहनता के साथ चित्रण हुआ है, इस चित्रण का यह वैशिष्ट्य है कि इसमें कहीं भी यौन कुंठाएँ व अश्लीलता अंकित नहीं हुई है।

प्रकृति :

प्रकृति सदैव से मानव मन को उद्ववेलित करती आई है, प्रकृति प्रेम मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है, क्योंकि मनुष्य स्वयं भी प्रकृति का ही एक अभिन्न अंग है, वह प्रकृति के मध्य जन्म लेता है, उसके नाना रूपों का उपभोग कर सुख-दुख सहजता हुआ अंततः प्रकृति की गोद में ही विलीन हो जाता है। इस प्रकार प्रकृति मनुष्य का आदि और अंत है, अतः प्रकृति के प्रति प्रगाढ़ अनुराग होना स्वाभाविक है। प्राकृतिक सौन्दर्य मनुष्य को अपनी ओर आकृष्ट करता है तथा उसकी कल्पनाशीलता एवं अनुभूतियों को जागृत करता है, यही कारण है कि प्रकृति काव्य का प्रमुख वर्ण्य विषय रहा है। विश्व साहित्य में प्रत्येक युग और देश में प्रकृति चित्रण मिलता है, भारत की निसर्ग सिद्ध दिव्य सुषमा के कारण भारतीय साहित्य में तो इसका प्रसार ओर भी अधिक है। समीक्ष्य कवि श्री विराट ने अपने काव्य में प्रकृति के विविध रूपों में व्यक्त अपार सौन्दर्य का सहज ही दर्शन किया है तथा अपनी अनुभूतियों की सघनता एवं सरसता से प्राकृतिक सौन्दर्य का परंपरागत एवं नवीन पद्धतियों के साथ चित्रण किया है।

प्रकृति अपनी व्यापकता, प्रभावोत्पादकता एवं सौन्दर्य के कारण प्रायः सभी प्रकार के काव्यों में मिलती हैं किन्तु स्वच्छंदता वादी काव्य में उसका सौन्दर्य विशेष परिलक्षित होता है। उसमें कवि प्रकृति के साथ अपना आध्यात्मिक तथा भावनात्मक सम्बंध स्थापित कर लेता है। उसके लिए प्रकृति जड़ न होकर चेतन सदृश हो जाती है। 'श्री विराट' ने भी प्रकृति का जीवन्त वर्णन किया है। कहीं-कहीं तो प्रकृति के सारे के सारे उपकरण मानों संचेतन होकर खुशियाँ मनाने लगे हैं।

इस संदर्भ में गीत 'यौवन हिन्दुस्तान का' की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत है-

"मधु पराग बिखराता ऋतुपति
अब उपवन में आ रहा ,
डाली-डाली बनी सुहागिन
कोकिल गीत सुना रहा,
फूल-फूल हँसता है
अपनी गंध लुटाता प्यार से
तितली भँवरे उन्मादित हैं
परिमल के अभिसार से" (11)

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उपर्युक्त पंक्तियों में बिसरना, आना, सुहागिन बनना, गीत सुनाना, हँसना, गंध लुटाना, उन्मादित होना और अभिसार करना मानवीय कार्य व्यापार हैं। प्राकृतिक उपकरण कोकिल, फूल, तितली पर इनका आरोप 'श्री विराट' की स्वच्छंदतावादी काव्य प्रवृत्ति को बतलाता है। 'तट के शैवाल' नामक गीत में संध्या पर मानवीय चेतना का आरोप रोचक है। -

"समर्पिता संध्या ने
खोंस लिए जुड़े में
तट के शैवाल
विंध्या की बाहों में धार सदा नीरा
सोनाली किरणों से आँजती ममीरा" (12)

'विराटजी' प्रकृति की स्थूल रूप छटा के प्रति ही आकृष्ट नहीं होते हैं अपितु उसके सूक्ष्म रूप का अवलोकन कर उसकी विराटता एवं विविधता में विचरण भी करते हैं, डूबे मस्तूल, सूर्यमुखी अस्प्रश्या, मौलसिरी फूली, बंसवट मे बंसरी, सुलगो पलाशवन, पीला कनेर, प्रणय विमुग्धा चाँदनी आदि असंख्य रचनाऐं प्रकृति के मानवीकरण एवं सूक्ष्म पर्यवेक्षण की परिचायक हैं।

कवि की 'नूतनोद्भावना सामथ्र्य' अर्थात उसकी अद्भूत कल्पना शक्ति उसे प्रकृति की साधारण सी दिखने वाली वस्तु या विषय में भी अभिनव सौन्दर्य का दर्शन करा देती है। 'श्री विराट' के काव्य में कल्पनाओं की उड़ान भी अपरिमित है। वर्षा ऋतु में आकाश में मेघमालाओं का आच्छादन जन सामान्य के लिए साधारण सी बात है, किन्तु 'विराट' जैसे कल्पनाशील कवि उनमें नए-नए विषयों , सौन्दर्य चित्रों का सहज दर्शन पा लेते हैं तथा अपने काव्य के माध्यम से पाठकों को भी उसका रसास्वादन करा देते हैं -

"गगन यह मेघ मण्डित है कि कोई चित्रकारी है
कभी लगता है कि मुग्धा नायिका की छवि उतारी है
किसी शिशु के कपालों पर डिठौना सा लगाया
कि कोई यक्ष ने फिर दूत इनको भी बनाया
किसी अभिसारिका ने ही रंगाया बैंगनी आँचल
सघन फिर घिर गये बादल"(18)

डा. सरला चौधरी के अनुसार स्वच्छंदतावादी काव्य में जनमन रंजन की जो जादुई क्षमता होती है, उसका अधिकांश श्रेय स्वच्छंदतावादी कवि की कल्पनातिशयता को है। स्वच्छंदतावादी काव्य में निहित सत्य वस्तुतः कल्पना का सत्य होता है। उसी के सहारे वह काव्य सहृदय संवेद्य बन जाता है। इस काव्य में बुद्धि अथवा मस्तिष्क को उत्तेजित करने वाली विचारों की तीक्ष्णता न होकर हृदय को झंकृत करने वाली अनुभूति की तीव्रता अधिक होती है। कल्पना काव्य रचना में संलग्न कवि की प्राणभूति शक्ति है। इसी शक्ति के सहारे वह काव्य में रूपचित्रों तथा अनेकविध बिम्बों का निर्माण करता है जो कि उसके काव्यादर्श में पूर्णतः सहायक सिद्ध होते हैं।"(19)

श्री विराट के गीतों में व्याप्त प्रभावोत्पादकता का श्रेय भी उनकी कल्पनाशीलता को ही है, उन्होंने कल्पना के बल पर ऐसे चित्र अंकित किये है जो कि वास्तविक चित्रों से भी अधिक मार्मिक और संवैद्य हैं। कल्पना रंजित निम्नांकित गीत इस संदर्भ में प्रस्तुत हैं -

"पश्चिम के गालों पर लाली दौड़ गई,
चित्रकार सूरज अब नयनागार चला।
जाते-जाते लहरों श्रृंगों को दे दिये मुकुट,
चंचल लहरों के मुख पर सिंदुर मला" (20)

श्री विराट के प्रकृति चित्रण में प्रकृति रस सहज ही प्रस्फुटित होता है। कल्पना की मौलिकता और अनुभूति की तरलता के साथ प्रस्तुतिगत नवीनता उनके चित्रण की विशेषता है । यथा -

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

"गहरे होते गए धुंधलके
चाँद उगा है हल्दी मलके
उभयनिष्ठ क्षण ये संध्या के (21)

प्रकृति के कोमल रूप "किरण के कशीदे" 'तट के शैवाल', 'सूर्यमुखी अस्पृश्या' आदि अनेक रचनाओं में भी मिलते हैं। उसके कठोर रूपों के चित्रण के लिए 'श्री विराट' ने दोपहर की तपती धूप को विशेष रूप से आलम्बन बनाया है। वें 'दुपहरया हाँफ रही' शीर्षक गीत रचना में लिखते हैं-

"प्यासी हिरनी सी
वैशाखी दुपहरिया हाँफ रही है
सूरज ने क्रोध किया, धूप चिलचिलाई
दूर्वा का मुख उतरा, धरा तिलमिलाई
सहमी परछाई/पगतल नीचे ही काँप रही है"(22)

पतझर युक्त वैशाखी धूप में तपते जंगल का निम्नांकित वर्णन भी प्रकृति के कठोर रूप को प्रदर्शित करता है -

"हाँफते अपत्र खड़े
जंगल सागौन के
सूख गिरे पात पात
नग्न हुई शाख शाख
हहर उठे चक्रवात
धूल यथा गर्म राख
पानी कह उठी प्यास
प्रण टूटे मौन के" (23)

प्रकृति के सौन्दर्य में श्री विराट ने श्रृंगार के संयोग ओर वियोग दोनों पक्षों में वर्षा के मोहक एवं मादक सौन्दर्य का चित्र उपस्थित किया है। वर्षा की फुहारें मन की श्रृंगारिक भावनाओं को उद्वेलित करती है। इस संदर्भ में कवि की आत्मानुभूति इस प्रकार व्यंजित होती है -

"आँचल ढलके ढल जाने दो
कजरा धुलता धुल जाने दो
यह है मुहूर्त संयम टूटे
हो प्राण विकल धीरज छूटे
स्वीकृति ही अर्थ निकलता है
इस झूठी आनाकानी में
हम दोनों साथ खड़े भीगें
बरखा के पहले पानी में"(24)

बरखा के पहले पानी में साथ-साथ भीगना जितना सुखद और तृप्तिप्रद है उसे एकांकी सहना उतना ही कष्टप्रद भी है। प्रवासी प्रियतम की विरह की विधुरा प्रिया की देह वर्षा की बौछारों में विरहाग्नि से झुलस जाती है, नागिन की तरह फन मारती है तथा भीगी हवाएँ कटार सी चुभती हैं -

"रह रह कर फन मारे हो
बिजुरी जीभ निकारे हो
कांपे हिया कि डर लागे
प्रियतम ऐसे में परदेस
मेरा दुर्बल तन दाहे
बौछारें चिनगारी-सी
बैरन भीगी हवा तुझे
काटे तेज कटारी-सी"(25)

"श्री विराट" के गीतों में प्रकृति सौन्दर्य के अलंकारित चित्र सर्वाधिक अनुपम हैं। कवि ने विभिन्न अलंकारों का आश्रय लेकर प्राकृतिक सौन्दर्य को अत्यंत प्रभावशाली बना दिया है। 'सूर्यमुखी अस्प्रश्या" शीर्षक गीत में प्रसन्न प्रकृति का निम्नांकित अलंकृत सौन्दर्य स्पृहणीय है -

"ऋतु बाँधे उत्तरीय/ केश मेघ-मालाएँ
सिंगारे लाज स्वयं / चन्द्र-मुकुर दिखलाएँ
ज्योति वसन अंगों पर / अलंकरण फूलों के
नभ गंगा की साड़ी दूधिया किनारी
एक लौ उभरती है छंटती अंधियारी"(26)

'सुलगा पलाशवन' नामक गीत में प्रकृति का सौन्दर्य अलंकारों से सुसज्जित होकर मोहित कर रहा है -

"दहके हैं डाल पर/अंगार या सुमन
सुलगा पलाशवन
पीली रूमाल बाँध गेंदा तो छैला है
सरसों को छेड़ रहा अलसी तक फैला है
गेहूँ की बाल पर/कसता प्रणय वचन
मन मथ रहा मदन ... "(27)

प्रकृति के अलंकारिक चित्रण में कवि ने मानवीकरण अलंकार का प्रयोग सर्वाधिक किया है, काव्य में मानवीय चेतना के आरोप से न केवल उसका सौन्दर्य बढ़ा है अपितु उसमें मार्मिकता भी आ गई है। शाम का वातावरण मौल सिरी फूली, चन्द्रोदय, पीला कनेर , इत्यादि रचनाओं में प्रकृति सौन्दर्य के अलंकृत चित्र उकेरे गये हैं।

काव्य में प्रकृति सौन्दर्यांकन की विविध परंपराओं के साथ-साथ बेला वर्णन और ऋतु वर्णन की परिपाटी भी प्रचलित है। प्रातः, मध्यान्ह, सायं, रात्रि आदि विभिन्न बेलाओं में प्राकृतिक उपकरण अलग-अलग सौन्दर्य छिटकातें हैं। विराट ने प्रकृति के इन सभी बेलाओं का सौन्दर्य अपने काव्य में अंकित किया है। कवि ने विभिन्न ऋतुओं का वर्णन भी किया है, इस प्रकार श्री विराट के गीतों में प्रकृति अपने संपूर्ण एवं विविध रूपों में प्रस्तुत हुई है।

निष्कर्ष

श्री विराट के गीतों में प्रकृति अपनी संपूर्ण मोहकता के साथ उपस्थित होती है और मानव की उदात्त प्रेम भावनाओं का प्रस्फुटन होता है। प्रकृति और मनुष्य के चरित्र के सारे हाव भावों का सूक्ष्म निरीक्षण सरोकार स्तर पर उनका आंकलन और काव्य स्तर पर उनका प्रस्तुतीकरण विराट की लेखनी से साकार होकर पाठकों को न केवल अभिभूत करता है अपितु उन क्षणों की अनुभूति भी कराता है जो रचनाकार को रचना करने के लिए प्रेरित करते हैं।